प्रथम अध्याय

आधुनिक नारी : स्थिति एवं गति

1. आज के समाज में नारी का स्थान।
2. आज की आधुनिक नारी।
3. नारी शोषण मुक्ति आंदोलन।
    1. पारिवारिक शोषण से मुक्ति।
    2. सामाजिक शोषण से मुक्ति।
    3. राजनीतिक शोषण से मुक्ति।
    4. आर्थिक शोषण से मुक्ति।
    5. अधिकारी व्दारा नारी शोषण से मुक्ति
4. हिन्दी की महिला उपन्यासकार : एक अवलोकन
5. हिन्दी की महिला उपन्यास लेखिकाओं के नारी पात्र

निष्कर्ष

अध्याय : 1

आधुनिक नारी : स्थिति एवं गति

आज के समाज में नारी का स्थान

आज के युग में नारी जीवन मूल्यों में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। नारी-शिक्षा, नारी-जागरण, स्वतंत्रता आन्दोलन, वैज्ञानिक अविष्कार, संविधान प्राप्त अधिकार, समकालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक स्थिति, पाश्चात्य विचार धाराएँ, पाश्चात्य संस्कृति आदि के कारण नारी जीवन में बहुत परिवर्तन लक्षित होने लगे हैं। पुराने मूल्यों के प्रति अनास्था और नये मूल्यों के प्रति आस्था यह मानसिकता उसके परिवर्तित जीवन मूल्यों की ओर संकेत करती हैं लेकिन परम्परागत धारणाओं को न वह पूरी तरह ठुकरा पाती है और न ही पाश्चात्य आधुनिक धारणाओं को पूरी तरह अपना सकती है। अन्तर्द्वन्द में फँसी इस नारी की स्थिति बडी सोचनीय है। प्रेम, यौन, नीति, अस्तित्व, मुक्ति आदि के प्रति परिवर्तित दृष्टिकोन उसमें बढ़ता जा रहा है। अतः प्रेमी और पति को अलग - अलग पुरूष के रूप में चुनती है। नैतिकता के नये मूल्यों को अपने जीवन में स्थान देती है। अपने अस्तित्व को बनायें रखने के लिए समस्त नीति मूल्यों को ठुकराना चाहती है। शोषणों से वह मुक्ति पाना चाहती है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण उसके जीवन में विसंगतियों का निर्माण होने लगा है। आधुनिकता के नाम पर वह देह प्रदर्शन की होड़ में लगी रही है।

आज नारी सुधार के लिए नारी को अनेक संविधानिक अधिकार प्राप्त हो चुके हैं। शिक्षा-दीक्षा के क्षेत्र में, राजनीतिक के क्षेत्र में, सामाजिक क्षेत्र में, आर्थिक क्षेत्र में आज की नारी अग्रेसर हो रही हैं। भारतीय नारियों ने इन क्षेत्रों में आज अपनी अमीट छाप भी छोडी है।

निष्कर्ष

आज सभी क्षेत्रों में नारी अग्रेसर दिखाई दे रही हैं। शिक्षा क्षेत्र, राजनीति, समाज स्थिति, आर्थिक क्षेत्र में से इन्होंने एक भी क्षेत्र ऐसा नहीं छोडा है जहाँ वह नहीं पहुँची। सरकार ने आज की नारी को सभी स्तर पर मुफ्त में शिक्षा देने का प्रबन्ध किया है। नौकरी में आरक्षण रखा है, जिसके आधार पर नारी निश्चित रूप में आज के समाज में अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्राप्त कर सकती है। लिंग भेद के कारण उन पर होनेवाले अत्याचारों की रोकथाम शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति, देश के विकास कार्य में स्थितियों का सहयोग आदि बातें आगे चलकर नारियों को निश्चित मात्रा में प्राप्त होगी जिससे आज के समाज में नारी का स्थान निश्चित ऊँचा बन जायेगा।

आज की आधुनिक नारी

समाज आज बदल रहा है। जहाँ नारी को देवी तथा लक्ष्मी के समान पूजा जाता था। वहाँ अब उसे पुरूषों की भोग्या वस्तु समझा जाने लगा। आज जब हम समाज में नारी की दशा का अवलोकन करते हैं, तो हमारा मस्तिष्क लज्जा से झुक जाता है। आज की नारी अपने अंक में दासता को छिपायें हुए है। उसे प्रताड़ित पीड़ित किया जाता है। पुरूष वर्ग नारी के साथ खिलवाड़ कर रहा है। अभिभावक छोटी आयु में लड़कियों का विवाह कर देते हैं जिन्हें विवाह का वास्तविक ज्ञान तक नहीं होता। बाल्यकाल में ही पुरूष उसे भोग की वस्तु बना लेते हैं। कभी-कभी तो यहाँ तक, देखा जाता है कि चौदह वर्ष की कन्या का विवाह चालीस वर्ष के पुरूष के साथ किया जाए, तो उसका जीवन नष्ट हो जाता है, और वह अबोध वधू विधवा बन जाती है। जिसकी हिन्दू समाज में बहुत दुर्दशा है, उन्हें आभूषण, सुन्दर वस्त्र पहने की आज्ञा अथवा स्वतंत्रता नहीं। मुस्कुराना उनके लिए अभिशाप है। कितना खेद का विषय है कि पुरूष तो अपनी इच्छानुसार कितनी भी शादियाँ कर सकता हैं।

आज की आधुनिक शिक्षा ने नारी को गृहलक्ष्मी न बनाकर उसे फैशन की तितली बना दिया है। पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंग कर उसने भारतीय नारी के आदर्शों को भूला दिया है। आधुनिक नारी को जहाँ अपनी उन्नति और विकास पर ध्यान देना है, वहाँ उसे यह भी ध्यान रखना होगा कि वह भारतीय नारी है। उसका पाश्चात्य रंग में बदल जाना भारतीय परम्परा के विरूद्ध है। कुछ लोग अब भी यह कहते हैं कि स्त्रियाँ पढ़ाई के उपरान्त गलत रास्ता अपनाती है। शिक्षित स्त्रियों का आचरण संदेहात्मक हो जाता है जो कि निरर्थक बात है।

भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात देश का वातावरण आज पूरी तरह परिवर्तित हो चुका है। स्त्रियों को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अवसर दिया जाने पर काम करने में उतनी ही कुशल है जितना की पुरूष।

विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में नारियाँ पुरूषों से आगे निकल गई हैं। उन्होंने सामाजिक एवं राजनीति के क्षेत्र में भी पुरूषों के कन्धें से कन्धा मिलाकर पदार्पण किया है। श्रीमती इंदिरा गांधी, श्रीमती विजया लक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी पर भारत को अभिमान है स्वतंत्र भारत के संविधान में नारी को पुरूष के बराबर का स्थान दिया गया। आधुनिक युग नारी के उत्थान का युग है। शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ सामाजिक क्षेत्र में नारी की दशा को सुधारने की कोशिश की जा रही है। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने कन्या कॉलेज जालन्धर के दीक्षान्त समारोह के शुभ अवसर पर बालिकाओं के लिए विभिन्न पाठ्यक्रम की आवश्यकता का संकेत देते हुए कहा था किप्रवृत्ति और इधर के मानव जाति को स्थिर बनाए रखने का भार स्त्री पर रखा है और मनुष्य का सृजन पुरूष नहीं अपितु स्त्रियाँ ही कर सकती है जो भी शिक्षा पद्धति हो उसमें नारी की गरिमा या अनिवार्यता को ध्यान में रखना चाहिए।

महात्मा गांधी ने कहा है कि पुरूषों एवं स्त्रियों की शिक्षा में उसी प्रकार का अन्तर किया जाना आवश्यक है। जैसा कि स्वयं प्रकृति माता ने उनमें किया है। आज नारी घर की चार दीवारों से निकलकर समाज सेवा के क्षेत्र में कूद पड़ी

है। गांधी के नेतृत्व में स्त्रियों ने स्वतंत्रता संग्राम में पूरा-पूरा सहयोग दिया, पुरूषों समान जेल में उन्होंने भी दुख उठाये। पुलिस लाठियाँ और गोलियाँ खायी। "स्वतंत्र भारत में नारी जाति ने आज करवट बदली है। हर जंजीर की कड़ियाँ चटख-चटख कर टूट रही है। नारी घर की चार दीवारों के अन्दर घुट-घुटकर जिंदगी के दिन काँटनेवाली पढ़ी-लिखी घुंघट की गुडिया नहीं है आज वह शिक्षित महिला के रूप में बाहय जगत् में प्रवेश कर रही है और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष से होड ले रही है। यह हर्ष का विषय है।"[1]

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत पग तल में।
पीयूष स्त्रोत सी,
बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में।"

आज नारी केवल उपभोग और उपभोग्य की वस्तु नहीं रही है और न ही वह मनोरंजन का विषय। वह पुरूष की सहभागिनी एवं यथार्थ अर्द्धांगिनी है। केवल धन, वैभव अथवा रूपसौन्दर्य के सहारे ही नारी का हृदय नहीं जाना जा सकता। नारी का हृदय जीतने के लिए सबसे पहले शर्त यह कि उसे इस बात का विश्वास हो जाये कि वह अपने आपको जिस व्यक्ति को समर्पित करने जा रही है, उस व्यक्ति के हाथ में उसका मन कहाँ तक पूर्ण एवं एकनिष्ठ रूचि लेता है। देह प्रदर्शन की होड के कारण वह आधुनिकता के नाम पर आदिमता की ओर बढ़ रही है।

<u>निष्कर्ष</u>

आज के युग की नारी शिक्षित बनकर व्यक्तित्व विकास में उचित पथ का अनुसरण कर रही है। व्यक्तिवादी दृष्टिकोन के कारण घर, परिवार, समाज से वह टूटती जा रही है। परिणामतः कुठा, संत्रास, अन्तर्दन्द में फँसकर उसका जीवन असंगत होता जा रहा है। कई नारियाँ स्वतंत्रता के नाम पर स्वच्छंदिता को अपनाकर समाज में गन्दगी फैला रही हैं। मजबूरी के बिना भी गलत कार्य करने लगी है,

जिससे समाज का स्वास्थ्य बिगड़ता जा रहा है। आज फैशन के नाम पर कई प्रकृतियाँ नारियों के विश्व में फैल रही है जो भारतीय संस्कृति के लिए उचित नहीं लगती।

नारी मुक्ति आन्दोलन

मानव मन की एक विशेषता यह रही है कि अन्य प्राणियों की अपेक्षा वह हमेशा अधिक स्वतंत्रता या अधिक मुक्ति की तलाश में भटकता रहा है। नारी भी इसके लिए अपवाद नहीं है। भारतीय संस्कृति के अनुसार चार पुरूषार्थों में से एक और अंतिम पुरूषार्थ मोक्ष है और यह मोक्ष ही वास्तव में अंतिम जीवन मुक्ति है। लेकिन आधुनिक युग में परिवर्तन के साथ-ही-साथ मुक्ति के अर्थबोध में भी परिवर्तन नज़र आता है। एक बात सही है कि भारतीय संस्कृति पुरूष प्रधान संस्कृति होने के कारण समाज और तज्जन्य विविध प्रकार के जीवन मूल्यों के बारे में पुरूषों के विचारों को ही प्रधानता मिली है और नारी की कुछ मात्रा में अवहेलना होती रही है। स्त्री-पुरूष स्वतंत्रता के असंतुलन के कारण नारी के मन में मुक्ति की भावना उभर उठी है। इस मुक्ति भावना को वह विविध रूपों में मूर्तिमान बनाने की कोशिश करती रही है। नारी मुक्ति की यह तलाश बहुआयामी रही है। कभी वह विवाह से मुक्ति चाहती है, तो कभी परिवार से। कभी उसे आर्थिक विषमता सताती है, तो कभी विविध प्रकार के शोषणों से वह त्रस्त बनती है और उन शोषणों के खिलाफ तीव्र संघर्ष करती नजर आती है। वस्तुतः नारी का शोषण इतना बहु आयामी है कि उन शोषणों से उसे समय-समय पर जीवन के विविध क्षेत्रों से संघर्ष करना पडता है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, मानसिक सभी स्तरों पर उसका शोषण होता जा रहा है और उस शोषण से मुक्ति पाने के लिए वह प्रयत्नशील है। आधुनिक युग में नारी की मुक्ति एक ऐसी परिकल्पना है, जो हमेशा एक-एक क्षेत्र में विभाजित हुई है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में वह खण्डित हो चुकी है। यह खण्डित मुक्ति ही उसके खण्डित व्यक्तित्व का प्रतिफलन है।

भारतीय समाज की प्राचीन परम्पराओं के बीच फँसी स्त्री का उद्धार करने के लिए स्वतंत्रता के पहले से ही अनेक प्रकार के प्रयत्न प्रारम्भ में हुए हैं। अनमेल

विवाह, बालविवाह, सती प्रथा आदि का विरोध ऐसे ही प्रयत्न थे। अनेक समाज-सुधारकों ने विधवा विवाह तथा नारी शिक्षा का समर्थन किया है। इस दशा में तब तक कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। स्वतंत्रता के बाद नारी जागृति की प्रबल लहर उभर उठी। वह अधिकारों की, अस्तित्व की माँग करने लगी किन्तु अब भी वह जागृति इतनी नहीं है जितनी, उसे सहज रूप में अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए चाहिए। "वह कुछ नया अपनाने से अभी भी झिझकती है और पुराने को पूर्ण रूप से त्याग ने में हिचकती है।"[2]

पिछले एक-दो दशकों से उस पर पाश्चात्य लिव मुवमेंट का प्रभाव भी परिलक्षित हो रहा है। पुरूषों के समान ही आज नारी नौकरी, विवाह और सेक्स समानता आदि के अधिकारों की माँग कर रही है। अपने इस नवीन आन्दोलन में अगर वह सफल हो गई तो शायद मातृसत्तात्मक समाज के आगमन का तुमुलनाद होगा। यों तो लिव-मुवमेंट पश्चिम में प्रारंभ हुआ पर भारत में भी यह लोकप्रिय होता जा रहा है। "अन्तर्मुखी की रानी और मैस बेटी इस मुवमेंट से प्रभावित लगती है तो परिन्दे की मिसेज अडवानी इसका प्रतिपादन करती-सी लाती है।"[3] भारतीय नारी को कभी किसी युग में पुरूषों के विरुद्ध खड़े होकर अधिकारों के लिए लड़ाई नहीं लड़नी पड़ी। क्योंकि पुरुष वर्ग ने ही नारी मुक्ति के प्रयास तथा नारी जागरण और नारी शिक्षा जैसे विचारों को भारतीय समाज में प्रश्रय दिया। नारी की अबला अवस्था देखकर पुरूषों ने ही उसे मुक्त करने के लिए कदम उठाएँ। नारी अधिकार, नारी-पुरूष समानता, नारी स्वतंत्रता, राष्ट्रीय कार्यों में नारी का हिस्सा लेने के लिए प्रेरित करनेवाला पुरूष वर्ग ही है। भारतीय नारी की मध्ययुग में हुई गिरावट से पीड़ित समाज-सुधारकों ने नारी स्थिति में सुधार करने का व्रत लिया और पुनर्जागरण काल में नारी जागृति, नारी उत्थान के लिए विविध संस्थाओं की स्थापना हुई। वास्तव में भारतीय नारी मुक्ति आंदोलन एक ऐसा आंदोलन है, जिसमें शोषित, पीड़ित नारी के मन की विद्रोही भावना फूट पडने की अपेक्षा पुरूष मन में ही उसकी स्थिति के प्रति क्रोध निर्माण हुआ और उन्होंने नारी को प्रथमतः सदियों की दासता की नींद से जागृत किया। इसी कारण अन्य आंदोलन

के इतिहास में और इस आंदोलन के इतिहास में पर्याप्त अन्तर है। समाज सुधारक राजाराम मोहन राय, महादेव गोविंद रानडे, महात्मा फुले, स्वामी दयानंद सरस्वती जैसे महान समाज सुधारक ही वास्तव में भारतीय नारी मुक्ति आंदोलन के प्रबल समर्थक रहे। इसी कारण भारतीय नारी मुक्ति संघर्ष नारी द्वारा नहीं, पुरूष द्वारा ही छेडा गया। स्वतंत्रता आंदोलन के बहाने घर की चार दीवारों से बाहर निकली नारी अब शिक्षा प्राप्त करने लगी। अब वह शिक्षित बनकर अपने अधिकार, हक, स्वतंत्रता, व्यक्तित्व आदि बातों से अच्छी तरह परिचित होने लगी हैं। स्वतंत्रता के बाद उसकी स्थिति में तेजी से परिवर्तन होने लगा है। साठोत्तरी काल में तो नारी का नया रूप उभरकर सामने आ रहा है। संक्षेप में भारत में सन 1960 के बाद नारी धारणाओं में बेहद परिवर्तन लक्षित होने लगा है। अब नारी ने अपने शोषण, अन्याय, अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाना प्रारम्भ किया है। अनेक नारी गठनों की स्थापना हुई है। नारी संगठनों की स्थापना का मूल उद्देश्य नारी की विविध शोषणों से मुक्ति और उसे विविध बातों में सहायता प्रदान करना है। अर्थात नारी समस्याओं के प्रति आज की शिक्षित नारी पूर्णतः सजग है। नारी संस्थाओं का निर्माण मुख्यतया नगरों तथा महानगरों में हुआ है। इनके अनुपात में ग्रामीण भागों में नारी संगठनों का जोर कम रहा है।

1· **पारिवारिक शोषण से मुक्ति**

डॉ·ज्ञानवती अरोड़ा के अनुसार परिवार एक ही वंश से संबंधित संतानसहित या संतान रहित, पति-पत्नी से निर्मित एक संस्था है। जिसमें पारस्परिक हितों की रक्षा की जाती है। उत्तरदायित्वों का आर्थिक सामर्थ्य और सदस्यों की शक्ति के अनुसार विभाजन किया जाता है और जहाँ पारिवारिक साधनों के समान उपभोग और समान स्नेह के सभी भागीदार होते हैं। समग्र देश के जीवन को सुव्यवस्थित रखने के लिए स्वस्थ समाज आवश्यक है। उसी प्रकार सामाजिक जीवन के नियमन और सुसंचालन एवं उसका नैरंतर्य कायम रखने के लिए परिवार की महत्ता और अनिवार्यता स्वयंसिद्ध है। लेकिन आज पारिवारिक संबंधों में स्नेह हीनता बढ़ती

नजर आती है। पति-पत्नी के संबंध में शोषण की प्रवृत्ति बढ़ गयी है। पति अपने पत्नी को अपने इशारों पर नाचने के लिए विवश, मजबूर बनाता है। जब पत्नी उसका प्रतिकार करती है, तो पति मारपीट कर उसे शारीरिक यातनाएँ देता है। अतः पति द्वारा शोषित ये नारियाँ अपने शोषण से मुक्ति पाने के लिए छटपटाती रहती है। सास-ससूर, देवर-देवरानी, ननद आदि द्वारा होने वाला शोषण भी इसके अंतर्गत आता है।

2· **सामाजिक शोषण से मुक्ति**

वर्तमान युग में नारी जागरण, नारी मुक्ति आंदोलन, नारी स्वतंत्रता, नारी शिक्षा, नारी समता, नारी अधिकार, नारी आरक्षण, नारी सुरक्षा आदि बातों की चर्चाएँ समाज में समाचार पत्रों में, राजनीति में और परिवार में होती दिखाई देती है परंतु आज भी समाज में नारी शोषण की समस्या इन सब बातों पर हावी बन गई है। आज भी समाज के धनवान वर्ग नारी देह को पैसों के बल पर खरीद रहा है और मनचाहे ढंग से उसका शोषण कर रहा है। अपनी कला प्रदर्शनी के लिए उद्युक्त बनी कलाकार नारी भी फिल्म में प्रवेश कर रही है पर वहाँ का पुरूष वर्ग प्रथम उसका दैहिक शोषण करता है। तमाशा नर्तकी को तो खुले आम गँदी हरकतों का शिकार बनना पडता है। समाज उसकी कमनीय देह से अपनी अतृप्त भोग लालसा तृप्त करता है। निम्न वर्ग की नारी तो मानो समाज के उपभोग की ही वस्तु है। आज भी निम्न वर्ग को सामाजिक शोषण का शिकार बनकर पीड़ामयी जिंदगी गुजारनी पडती है। वासनान्ध पुरूष तो असहाय नारी का शोषण करने के लिए हमेशा उद्युक्त रहे हैं। परिणामतः आज बलात्कार की शिकार बनी नारियों की चर्चा तो समाचार पत्रों की नित्य वार्ता बनी है। आधुनिक नारी जागरण युग में भी नारी स्थिति भयंकर एवं भयावह बनी है। शोषण की शिकार बनी यें नारियाँ मुक्ति की तलाश में भटक रही है। विवेच्य साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में इन शोषित, पीड़ित, अत्याचारित नारियों की दर्दभरी कहानियों को उपन्यासकारों ने चित्रित किया है, जो नारी मुक्ति की तलाश को प्रकट करती है।

3· राजनीतिक शोषण से मुक्ति

साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में अपवाद रूप में नारी के राजनीतिक शोषण का विवेचन भी प्राप्त होता है। राजनीतिक नेता जो प्रजा के हितचिंतक होते हैं, संरक्षक होते हैं, वे भी नारी के प्रति कठोर और घिनौना व्यवहार करने लगे तो नारी का इस संसार से विश्वास उठना स्वाभाविक है। उजाले में सफेद कपड़ों में घुमने वाले ये प्रतिष्ठित नेता अंधेरे में काली करतूतें करते हैं। विवाहित होकर भी वे परनारी को ब्याहता बनाकर घर ले आते हैं। उनका शोषण करते हैं। राजकुमार भ्रमर और दीप्ति खण्डेलवाल ने इस सफेद पोश नेताओं का पर्दाफाश किया है। ये तथाकथित ऊँचे और प्रतिष्ठित लोग अपनी बीवी, बेटी आदि पारिवारिक सदस्यों को भी अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए इस्तेमाल करते हैं और उन्हें शोषण का शिकार बनाते हैं।

4· आर्थिक शोषण से मुक्ति

परम्परा से नारी शारीरिक और मानसिक रूप से शोषित होती आयी है परन्तु आधुनिक युग में उसके शोषण का एक नया आयाम उभर आया है। आज उसका आर्थिक शोषण भी किया जाने लगा है। आधुनिक युग में महिलाओं का कार्यक्षेत्र घर की चार दीवारों तक ही सीमित नहीं रहा। "मध्यवर्ग की नारी अब अर्थ प्राप्ति के लिए कार्यालयों, कारखानों या स्कूलों आदि में पहुँच चुकी हैं। पढ़-लिखकर यह नारी अर्थ प्राप्ति के काबिल बनी है। पर अब परिवार में इस नारी की ओर पैसा कमाने की मशीन के रूप में ही देखा जाता है।"[4] परिवार के लोग उसके सुख-दुख से उतने सम्पृक्त नहीं होते, जितने कि उसकी आय से। परिणामतः आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने वाली नारी भी अब शोषण की शिकार बनी है। कमाई करती है वह और उसकी कमाई के हकदार बने हैं परिवार वाले अगर वह अपनी मर्जी के अनुसार अर्थव्यय करे, तो परिवार वालों को यह अच्छा नहीं लगता है। अर्थ प्राप्ति करते-करते वह विवाहयोग्य आयु पार करके प्रौढा बन जाती है। पर माँ-बाप झूठी शेखी बघारकर उसके विवाह की बात टालते रहते हैं। परिणामतः ऐसी नारी को अभिशप्त अविवाहिता की जिन्दगी गुजारनी पड़ती है। साठोत्तरी उपन्यासों

में आर्थिक शोषण का यह नया पहलू दृष्टिगोचर होता है, जो घर और बाहर सभी जगहों पर लक्षित होता है।

5· **अधिकारी द्वारा नारी शोषण से मुक्ति**

आज अधिकारी वर्ग लापरवाह बन चुका है। अपने मातहत काम करने वाली नारी पर वह रोब जमाकर उसका दैहिक, मानसिक शोषण भी करता है। अपने अधिकार की रोब में वह भूल जाता है कि वह नारी जाति पर कितना अन्याय, अत्याचार कर रहा है और उसका कितना शोषण कर रहा है। ऐसे अधिकारियों से मुक्ति पाने हेतु नारी छटपटाती है परंतु विवश मजबूर बनकर उसे काम करना ही पड़ता है। पुलिस वास्तव में समाज संरक्षण के हेतु नियुक्त की जाती है परंतु इस वर्ग के अधिकारी और कर्मचारी आज रक्षक के स्थान पर भक्षक बने हैं। वे नारी जाति पर अन्याय, अत्याचार करने लगे हैं। असहाय नारी की सहायता के उद्देश्य से निकाले गये संगठन भी अब अपना मूल उद्देश्य खो चुके हैं और उनमें भी नारी के शोषण का सिलसिला जारी है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि नारी भी नारी के शोषण में पीछे नहीं है। कहीं सास बनकर बहू का शोषण करती है, तो कहीं ननद बनकर भाभी का शोषण करती है, कहीं पूँजीपति नारी नौकरानी नारी का शोषण करती है। अतः ये नारियाँ भी शोषण से मुक्ति की तलाश करती दिखाई देती हैं।

निष्कर्ष

नर-नारी स्वतंत्रता के असंतुलन ने नारी मुक्ति आंदोलन को प्रश्रय दिया है। आज की नारी समानाधिकार माँगना चाहती है। वह पुरुष की दासता में पलना, अपने स्वतंत्र अस्तित्व को दबाना नहीं चाहती है। वह घर तथा बाहर अपने स्वतंत्र अस्तित्व की माँग कर रही है। नारी पुरुषों से किसी भी काम में पीछे नहीं है। वह पुरुष की भाँति समय मिलने पर सबकुछ कर सकती है। समाज, घर, बाहर,

शादी, विवाह सर्वत्र उसका शोषण कर रहा है। इस हालत में वह अपने सुधार के लिए संगठित होकर आजादी की लड़ाई लड़ रही है। बीजींग में सम्पन्न विश्व महिला सम्मेलन इसका अच्छा सबूत हो सकता है। विश्व की पचास हजार नारियाँ बीजिंग में संगठित होकर वैश्विक स्तर पर नारी मुक्ति आंदोलन का नारा लगा सकती है। ये नारियाँ हर स्तर पर उनके होने वाले शोषण के खिलाफ आवाज उठा रही है। सन 1975 भारतीय स्त्री संस्कृति में जागरण लाने के लिए कारण रहा। सन 1975 से ही नारी मुक्ति आंदोलन की जड़े दृढ़ होने लगी क्योंकि भारत सरकार ने सन 1975 "महिला वर्ष" के रूप में मनाकर महिलाओं के विकास की दिशा को निश्चित किया, जिसके परिणाम स्वरूप आगे चलकर नारी मुक्ति आंदोलन की हवा बहने लगी। नारी घर-बाहर होने वाले शोषण के खिलाफ लड़ने लगी। विविध जगहों पर नारी-मुक्ति संगठनों का निर्माण हुआ। इन संगठनों द्वारा नारी विकास, नारी मुक्ति पर विचार प्रस्तुत होने लगे। शैक्षिक योग्यता प्राप्त नारी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने लगी और नारी मुक्ति आंदोलन का प्रारंभ हुआ। जागतिक महिला परिषद द्वारा चीन में स्थित बीजिंग में सितम्बर 1995 में चतुर्थ महिला विश्व सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें 50 हजार महिलाओं का सहभाग रहा। नारी मुक्ति आंदोलन की यह एक बड़ी उपलब्धि मानी जा सकती है। सन 1994 को भारत सरकार ने पारिवारिक वर्ष के रूप में घोषित किया, इसी से भारत सरकार का महिलाओं के विकास क्रम पर लक्ष्य केंद्रित हुआ।

हिन्दी की महिला उपन्यासकार : एक अवलोकन

महिला उपन्यास लेखिकाओं ने स्वातंत्र्योत्तर युग में पुरूष उपन्यासकारों के स्वर में स्वर मिलाया। उन्होंने अपने अनुभवों के आधार पर आज की नारी की सामाजिक नियति और मानसिकता को बड़ी गहराई से उकेरा। इन लेखिकाओं ने पुरूष लेखकों की तरह नारी को महिमान्वित नहीं किया। ये एक विशेष दायरे की नारी की पहचान उन्होंने हमें करा दी है। यह विशेष दायरा पढ़ी-लिखी मध्यवर्गीय नारियों

का है। नारी ने नारी की मनस्थिति को किस विशिष्टता के साथ पहचाना है, किस प्रकार से उसको अभिव्यक्ति दी है यह बड़ी महत्व की बात है।

आज महिला उपन्यासकारों द्वारा लिखित महत्वपूर्ण उपन्यास हिन्दी साहित्य में अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित कर रहे हैं। नारी की अपनी सत्ता महत्ता रही है। पाश्चात्य विचारक लामर्टिना के शब्दों में "सभी महान कार्यों के आरम्भ में नारी का हाथ रहा है।"[5]

कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा के शब्दो में "नारी केवल मॉस-पींड की संज्ञा नहीं है।"[6] आदिकाल से आज तक विकास पथ पर पुरूष का साथ देकर उसकी यात्रा को सरल बनाने का कार्य नारी ने किया है। "नारी और पुरूष एक-दूसरे के पूरक हैं किन्तु वे दो ऐसे छोर भी हैं, जो सृष्टि के क्रम को बनाये हुए हैं।"[7] नारी कोमल, समर्पिता, स्नेह और सौजन्य की मूर्ति होती है। वह वाणी से जीवन को अमृतमय कर देती है। उसका हृदय सन्तप्तों को शीतल छाया देता है और उसका हास्य आशा की किरणें बिखेरता है। आदिकाल से ही नारी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में पुरूष के साथ चलती रही है। अधिकांश सभ्यताएँ और संस्कृतियाँ अपने प्राचीन युग में मातृसत्ता प्रधान रही हैं।

हिन्दी में आज महिला उपन्यास लेखिकाओं की संख्या अत्यधिक है और इन लेखिकाओं में से अधिकांश उपन्यास लेखिकाओं ने इस क्षेत्र में साहस का परिचय दे दिया है, इसमें संदेह नहीं।विषय वैविध्य की दृष्टि से उनके उपन्यास बहुआयामी हैं।

साठोत्तरी कालखंड में महिलाओं द्वारा प्रचुर मात्रा में हिन्दी उपन्यास लिखे गये। हिन्दी उपन्यास साहित्य में महिला उपन्यासकारों का आगमन एक बड़ा योगदान माना जा सकता है। इन महिला उपन्यास लेखिकाओं में प्रेम और बलिदान पर ही अधिक उपन्यास लिखे।

हिन्दी उपन्यासों को उषादेवी मित्रा के रूप में महिला उपन्यासकार का योगदान मिलना प्रारंभ हुआ। यह उस युग की दृष्टि से बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

उषादेवी ने प्रेम के उदात्त स्वरूप को अपना आधार बनाया तथा यह दर्शाया कि "नारी त्याग और बलिदान से प्रेरित होकर जीवन में प्रेम की निष्ठा बनाये रखती है।"[8] "सम्मोहित", "नष्ट नीड़", "जीवन की मुस्कान", "बचपन का मोल", "प्रिया सोहिनी" आदि अनेक कृतियाँ उषा देवी मित्रा एक के पश्चात् एक हिन्दी साहित्य जगत् को देती रही। श्रीमती मित्रा के उपन्यास घटना-प्रसंगों के चित्रण में जीवन्त मनुष्य की कोमल कृतियों के अंकन लगते हैं।

'कृष्णा सोबती' ने बड़ी तन्मयता से लिखा है। उनका एक-एक शब्द, वाक्य, कामा, फुलस्टॉप, हफ्तों के परिश्रम से बना है। "डार से बिछुडी" से उनकी औपन्यासिक यात्रा आरम्भ होती है। "यारों के यार", "तिन पहाड़", "मित्रो मरजानी", "सूरजमुखी अँधेरे " आदि में लगभग समाप्त हो जाती है। उनके उपन्यासों में से गुजरते हुए ऐसा लगता है कि अलग-अलग समय में उन्होंने अलग-अलग रचनाएँ नहीं लिखी। एक ही रचना के विभिन्न अध्याय लिखे हैं अपने जीवन को सुलझाते-उलझाते उनके पात्रों ने सामाजिक मान्यताओं श्लील-अश्लील, नैतिक-अनैतिक आदि का उल्लघंन किया है। उनके पात्रों को न जीविका की चिन्ता है, न समय की, न समाज की।

'शिवानी' ने व्यष्टि एवं समष्टि के द्वन्द्वों से कथावस्तुओं का ताना-बाना बुनकर तथा अपने व्यक्तित्व को लेकर उपन्यास जगत् में सम्मोहन का सृजन करके महिला उपन्यासकारों के बीच जो स्थान अर्जित किया है वह प्रशंसनीय है। इनके उपन्यास व्यक्ति विशेष को प्रधानता देते हुए स्वयं उदात्तता की सीमा रेखाओं को परिस्पर्श करने लगते हैं। कहीं किसी ऐसी नारी की कहानी है, जो अपने सौन्दर्य के कटु अनुभव माँगती है। जीवन के चौराहें पर खड़ी रह जाती है और कहीं ऐसी नारी के भोगे हुए जीवन की अभिव्यक्ति है जो पाठकों से अपनत्व स्थापित कर लेती है। कहीं ऐसी नारी भी है, जो एकाकी रहकर समाज से टक्कर लेती है और अपने व्यक्तित्व से विविध प्रश्नों को उजागर करती है इनके उपन्यासों में कहीं प्रेम और विवाह की समस्या है, तो कहीं राजनीति और रोमान्स के ताने-बाने है। शिवानी के उपन्यासो में उत्कृष्ट सांस्कृतिक चित्रण भी है तथा मानव जीवन की चारित्रिक विशेषताओं

का सूक्ष्मता से अध्ययन एवं यथातथ्य का चित्रांकन भी है। "मायापुरी", "भैरवी", "कृष्णकली", "श्मशान चम्पा", "कैजा", "रतिविलाप", "विषकन्या" आदि इनके ऐसे ही उपन्यास हैं, जिनके माध्यम से शिवानी के व्यक्तित्व की अलग पहचान हो सकती है।

'उषा प्रियम्वदा' ने आज के नारी जीवन की विसंगतियों को प्रस्तुत किया है और औपन्यासिक कृतियों में उन्हें आत्मसात किया है। परिवर्तित संदर्भो, नई परिस्थितियों तथा उलझन पूर्ण अन्तःस्थितियों में नारी के फिट होने की प्रवृत्ति और आधुनिकता तथा भारतीय संस्कारों के मध्य सूक्ष्म द्वन्द को उन्होंने सफलता पूर्वक चित्रित किया है। यद्यपि लेखिका अस्तित्ववादी जीवन दर्शन से पूर्ण प्रभावित लगती है जिसके फलस्वरूप उनके पात्रों में अनास्था, भय और संत्रास बना रहता है। पात्रों में परिस्थितियों से उबरने का साहस भी उन्हें है, फिर भी नारी की दुविधा और उसकी छपटपटाहट का ऐसा सफल चित्रांकन अन्यत्र विरल है। "पचपन खंबे लाल दीवारें", "रूकोगी नहीं राधिका···?" इनके ऐसे ही उपन्यास हैं जिनमें अस्तित्ववादी जीवन दर्शन के विविध आयाम देखने को मिलते हैं।

'शशिप्रभा शास्त्री' ने अपने लेखन के माध्यम से मानों अपने को पहचानने का प्रयास किया है। अपने लेखन को श्रीमती शास्त्री ने विभिन्न सन्दर्भो से जोड़कर बहुआयामी बनाया है। कहीं दाम्पत्य जीवन के दोहरे चेहरे खींचे हैं, कहीं पीडियों के बीच के अन्तराल से उगी विभिन्न समस्याएँ हैं और कहीं स्त्री और पुरूषों के बीच का प्रेम है, जो कभी त्रिकोणी बन जाता है और कभी पुनः अपने मूल रूप पर वापस आ जाता है। ये कभी कथ्य श्रीमती शास्त्री के वापस आकर मनोविज्ञान के घेरे में घुसकर शब्दों में पिरोये जाते हैं। लेखन डॉ·शास्त्री के विचार में एक सन्तता की प्रक्रिया है। जिनमें लेखक के लिए अपना सब कुछ झोंक कर स्वयं को छोड़ना भी आवश्यक हो जाता है। उनके ही शब्दों में स्वयं को पूरी तरह झोंक देना ही लेखक का एक मात्र धर्म है और यही अच्छे लेखन की पूर्ण मंजिल भी अच्छा लेखन खुद उठाता है। उसे किन्हीं वैसाखियों की जरूरत नहीं होती। "वीरान रास्ते

और झरना", "अमलतास", "नावें", "सीढ़ियाँ "परछाइयों के पीछे" आदि उपन्यास इन बातों के सबूत पेश करते हैं।

'मेहरून्निसा परवेज' का लेखन जीवन की समग्रता का प्रस्तुतीकरण लेकर सामने आता है। सामाजिक व्यवस्था की अभिलाषा और इस यातना से मुक्ति की छटपटाहट ही इनके लेखन का आधार है। मेहरून्निसा परवेज के पात्र सामाजिक चट्टानों से टकराते नहीं, बल्कि जीवन की राह बनाते हैं। उन्होंने अपने व्यापक अनुभव को ही अपनी रचना का आधार बनाया है। "आँखों की दहलीज", "उसका घर", "कोरजा" एवं "अकेला पलाश" आदि प्रमुख उपन्यास हैं। उनके कथ्य में एक पुरूष दो नारी अथवा एक नारी दो पुरूष के त्रिकोण बार-बार आवर्त की तरह घुमते रहते हैं। "इन दुहराहटों से ऐसा लगता है कि लेखिका के मन में कोई ग्रन्थि तो नहीं पनप रही है या कि इस समस्या के बिना कोई कथा रची नहीं जा सकती या कि यह किसी मानसिक बीमारी का संकेत है ? अगर ऐसा है तो यह बहुत चिन्ता की बात है।"[9]

'मन्नू भंडारी' ने "आपका बंटी", "एक इंच मुस्कान", "महाभोज", "स्वामी" औपन्यासिक कृतियों के माध्यम से लेखन के क्षेत्र की यात्रा तय की है। ये उपन्यास विभिन्न समस्याओं को लेकर चले हैं। उसके लेखन में स्तर का तारतम्य है और स्थायित्व है। उनके रचना संसार से स्पष्ट होता है कि उन्होंने उसका स्वयं साक्षात्कार किया है और लेखिका के रूप में अपना अविष्कार भी किया है। संवेदनाएँ एवं परिवेश के प्रति गहरी सहानुभूति दिखाई है और इन तथ्यों के माध्यम से लेखिका बार-बार अपनी खोज भी करती है। मन्नू भंडारी के उपन्यासों के विषय वैविध्यपूर्ण लगते हैं। "महाभोज", "आपका बंटी" इसके अच्छे उदाहरण हैं।

'ममता कालिया' का लेखन विशेष रूप से भारतीय नारी के परिवेश के इर्द-गिर्द घुमता है। वे नारी को मानसिकता से घुटते हुए कुछ प्रश्नों को उठाती है एवं तथ्यों का पोस्टमार्टम-सा करती हुई उनकी यथार्थता को बीन-बीन कर रखती जाती है। आज के समाज के मानस में कुँवारेपन की धारणा अथवा पति-पत्नी के

विभिन्न दिशाओं में चलने के कारण गृहस्थ जीवन की अवधारणा ऐसे ही जीवन तथ्य हैं, जो ममता कालिया की कथाओं को गति देते हैं। अब तक प्रकाशित ममता कालिया के दोनों उपन्यास पति-पत्नी के प्रेमहीन संबंधों पर आधारित हैं। उनके "बेघर", "नरक दर नरक" इसके अच्छे उदाहरण हैं। "व्यंग्य और करूणा के सहारे युगीन अन्तर्विरोधों को समर्थ और चुटीली भाषा द्वारा उन्होंने अभिव्यक्ति दी है। महिला कहानीकारों की अंतर्मुखी प्रवृत्ति के वृत्त यहाँ नहीं मिलते। आप साठोत्तरी महिला कहानीकारों में प्रमुख हैं।"[10]

'मालती परूलकर' ने यद्यपि हिन्दी उपन्यास को बहुत कम कृतियाँ ही दी है। फिर भी उनके उपन्यासों की अलग पहचान है। "इन्नी", "मुक्ता", "जहाँ पौ फटनेवाली है", "अपने आगोश" में परिवार, समाज, राजनीति आदि सब है।

नारी होने के नाते नारी के अन्तर्मन को समझने का जो प्रयास परूलकर ने किया है वह अपने आप में विशिष्ट है। लेखिका स्वयं आध्यात्मिक अभिरूचि की है। भारत के योगियों से साक्षात्कार पर पंछियों तथा पेडों की भाषा के सबंध में अनेक प्रश्नों का समाधान करने का प्रयास भी किया है। इनकी कथाओं में इतनी तन्मयता है कि पाठक डूब जाता है भाषा की सरलता एवं उसमें आँचलिकता का पुट लेखिका की अपनी उपलब्धियाँ हैं।

सन् 1960 के आसपास साहित्य जगत् में 'कृष्णा अग्निहोत्री' ने प्रवेश किया। उनके कथा साहित्य में एक ओर अनुभूति पक्ष की व्यक्तिगत जिम्मेदारी, ईमानदारी है। दूसरी ओर भाषा शैली का वैभव है। आदर्श एवं यथार्थ का स्वस्थ समानुपातिक समन्वय रखने का प्रयत्न करने के पश्चात भी उनके लेखन में यथार्थ के प्रति अधिक झुकाव है। आधुनिक समाज की बहुविध विडम्बनाएँ, भ्रष्टाचार एवं अनैतिक कार्यों को भी लेखिका ने प्रस्तुत किया है। उनके "गलियारे", "बात एक औरत की", "बौनी परछाइयाँ", "टपरेवाले", "कुमारिकाएँ" आदि उपन्यास इस बात के सबूत हैं।" कृष्ण अग्निहोत्री भारतीय संस्कृति के डैनों में सिमटे आधुनिकता के स्वर और व्यक्ति मन की छोटी-बड़ी संवेदनात्मक स्थितियों को कथानक के क्लेवर में प्रस्तुत

करने वाली कथाकार हैं।"[11]

'मंजुल भगत' युवा पीढ़ी की उन समर्थ लेखिकाओं में से हैं जिन्होंने अपने परिवेश की विद्रूपताओं और क्रूरताओं को गहरी संसक्ति से देखा है उनकी औपन्यासिक कृतियाँ उसके सर्जक व्यक्तित्व की अच्छी पहचान कराती हैं। मंजुल भगत की इन कृतियों में जिस गहरी वेदना एवं व्यापक सहानुभूति के दर्शन होते हैं, उससे पाठक प्रभावित तो होता ही है, भविष्य में उनके प्रति आस्थावान भी होता है। अपने उपन्यास के पात्रों के सन्दर्भ में भगत का कथन, "मेरे पात्र न कायर है, न विद्रोही।"[12] उनमें स्थितियों से टकराकर टिके रहने की क्षमता है, समस्याओं से बिमुख होकर पलायन उन्होंने कभी नहीं किया मेरे नारी पात्रों में शिक्षित, आधुनिकाएँ, वृद्धाएँ और निम्नवर्गीय सभी हैं। उनका कोई भी नारी पात्र विद्रोह करके पतिगृह नहीं त्यागता, परिस्थिति से जूझता जरूर हे, ध्वसांत्मक विद्रोह में उनकी नायिकाओं का विश्वास नहीं। उनके "अनारो", "बेगाने घर में", "कितना छोटा सफर" आदि उपन्यासों में उपर्युक्त तथ्यों के दर्शन हमें होते हैं।

'निरूपमा सेवती' के पात्र महानगरीय जीवन की दौड में अपने अस्तित्व की तलाश करते हैं तथा शोषण जनित विवशताओं से उभरने की मानसिकता से जुडे होते हैं। लेखिका ऐसे में नियति और दुख के भयावह खड्ड के कगार पर झूलते हुए यही पाती है कि चाहे जीवन में हो या रचना में वेदना और पीड़ा जीवन की अनिवार्यता को स्वीकार करके चलना होता है। महिला उपन्यासकारों के बीच निरूपमा ने विशेष ख्याति अर्जित की है। वैचारिकता की दृष्टि से उनके उपन्यास अपनी कोटि के अकेले हैं। कथ्य में नवीनता एवं शिल्प में नूतनता एवं प्रवाह निरूपमा की निरूपम विशेषताएँ हैं। उनके उपन्यास - .... "पतझड की आवाजें", बंटता हुआ आदमी", "मेरा नरक अपना है", आदि में ये तथ्य स्पष्ट हुए है।

आन्तरिक उत्पीडन और विवशता के भँवर में फँसी नारी के जीवन को लेकर चलने वाली दीप्ति खण्डेलवाल के उपन्यास सहज भाषा में मार्मिकता और संवेदनशीलता से भरे हुए हैं। कुछ उपन्यासों में तो दीप्ति ने अपने भोगे हुए यथार्थ को चित्रित किया है। जो भी हो उनकी औपन्यासिक कृतियाँ आकर्षक, प्रभावी हैं। उनकी अनुगूँज मस्तिष्क में कई-कई दिनों तक भरी रहती है। उनके उपन्यास, "प्रिया", "कोहरे", "प्रतिध्वनियाँ" इन तथ्यों पर प्रकाश डालते हैं।

अब तक "सूर्यबाला" के दो उपन्यास "मेरे संधि पत्र" तथा "सुबह के इन्तजार तक" प्रकाशित हुए हैं। ये परिणाम की दृष्टि से अल्प है किन्तु महत्ता की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। सूर्यबाला जी ने शैली में सरसता, अभिव्यक्ति में नवीनता आदात्य की सीमा रेखाओं को स्पर्श करते हुए सभी में एक प्रकार का नया तेवर लेकर उपन्यास जगत् में कदम रखा है। उनके पात्र गार्हस्थ्य और दाम्पत्य जीवन की सीमा रेखाओं के बीच घुमते हैं।

'सुश्री सुनिता जैन' हिन्दी और अंग्रेजी में साधिकार लिखती है। हिन्दी उनका 'अनुगूंज' उपन्यास है। सुश्री जैन एक उत्कृष्ट कवयित्री भी है। उनका लेखन विभिन्न भावों को लेकर चला है। उन्होंने अनुगूंज और मरणातीत में प्रेम के बदलते स्वरूप को व्यक्त किया गया है, जो आधुनिकता के परिणामस्वरूप है। बिन्दु और बीज्यू में प्रेम की प्रथम फुहार से संचारित धरती की सौंधी सुगन्ध।

'मृदुला गर्ग' सुदर्शना है। उनका साहित्य भी तदानुरुप ही सुदर्शन है। श्रीमती गर्ग "बोल्ड" है। उनका लेखन भी बोल्ड है। सहानुभूति न वे चाहती न ही बाँटती। स्वाभिमान उनमें कूट-कूट कर भरा है। वे सत्य के एक अंश को लेकर उसे "ग्लेरिफाई" नहीं करती। प्रत्युत्त उसको सम्पूर्णता में लेती है। जीवन में दुराव छिपाव वे जानती नहीं और अपने लेखन को भी उन्होंने उसी के अनुरूप ढाला है। उनकी जैविक तृष्णाओं की सहज अभिव्यक्ति भी अपने प्रति बोला गया सच है। एक सूक्ष्म पारदर्शी वेदना धारा उनके लेखन और व्यक्तित्व में बहती हुई दिखाई पड़ती है वह कभी हँसी के नीचे झलकती है तो कभी शुद्ध त्रासदी बनकर

उभरती है। मृदुला की चार औपन्यासिक कृतियाँ प्रकाशित हुई हैं। "उसके हिस्से की धूप", "चित्तकोबरा", "वंशज", "अनित्य" आदि।

'मालती जोशी' ने हिन्दी साहित्य की अनेक विधाओं को गति दी है। किन्तु सर्वाधिक सफलता उन्हें उपन्यासों में मिली है। इनके अधिकांश उपन्यासों में दाम्पत्य, पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन को ही उभारा गया है। ये चित्र फलक पर अंकित होने पर अपने जाने पहचाने लगते हैं। उपन्यास के क्षेत्र में जो ख्याति श्रीमती जोशी को मिली है, वह अन्य उपन्यास लेखिकाओं को कम ही मिली है। उनका प्रत्येक उपन्यास अन्त में उदात्तता की भावभूमि पर जाकर समाप्त हो जाता है। एक ओर परम्परा का निर्वाह और दूसरी ओर आधुनिकता से उसका अद्भुत समन्वय श्रीमती जोशी ने अपनी अनुभूतियों को ही कागज पर उतारा है। उनके अपने शब्दों में "मैं तो अपनी अनुभूतियों को कागज पर उतारती हूँ, वे अनुभूतियाँ जहाँ से भी मिले।"[13]

नारी पात्रों को अपने उपन्यासों का केन्द्र बनाकर 'शुभा वर्मा' ने उनके आसपास के परिवेश सहित उनके जीवन का यथार्थ चित्रांकन किया है। ये नारी पात्र सामाजिक मान्यताओं के प्रति संघर्षरत हैं। सामाजिक बन्धनों को ओढ़ते-तोड़ते इनके जो रूप श्रीमती वर्मा के उपन्यासों में व्यक्त हुए हैं। उनसे पाठक सहज ही जुड़ता चलता है। आज की नारी के अदम्य साहस के साथ उसकी विशेषताओं का बेवाक चित्रण इन उपन्यासों की विशेषताएँ हैं।

'मृणाल पाण्डेय' का लेखन अपनी माँ शिवानी से विरासत में मिला है। माँ की वे प्रशंसिका भी रही है आलोचिका भी। श्रीमती पाण्डेय अस्मिता की वह कडियल गुढली जिससे उनका लेखन निकलता है एक साथ ही उनकी उपलब्धि भी है उनका दण्ड भी। उनके अपने शब्दों में इसके परे मैं कुछ भी नहीं हूँ, न बहू, न बेटी, न पत्नी, न माँ, न मित्र सिर्फ एक लेखिका हूँ, जिसकी पहली शर्त है सच बोलना। "लिखना श्रीमती पाण्डेय के लिए इन विशाल विश्व को समझना है। हर रचना में वे हैं, उनकी रेखाएँ हैं, उनका रक्त हैं, उनका कैल्शियम, फास्फोरस, लोहा, मेंगेजीन

और प्लाज्मा है, पर रचना रचना है, वे वे हैं।"[14]

नारी जीवन की विसंगतियों का सवाल अभिव्यक्ति के साथ ही कौटुंबिक एवं ग्रामीण परिवेश जिसका हृदयग्राही चित्रांकन 'मृणाल पाण्डे' की लेखनी ने किया है, वह अछूता है। अभिव्यक्ति में गहराई लिए कोमल भावनाओं को सहज ही पकड़ पाने की ऐसी शक्ति अन्यत्र विरल है। मृणाल पाण्डे के "विरूद्ध" 1978 में इस बात को पुष्टि मिलती है।

इन उपन्यास लेखिकाओं में 'कुसुम अन्सल' का स्थान भी महत्वपूर्ण है, जिन्होंने हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी उपन्यास लिखकर अपनी अनुभूति और संवेदना का परिचय पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। कुसुम अन्सल के "उदास आँखें", "नींव का पत्थर", "उसकी पंचवटी", "उस तक", "अपनी अपनी यात्रा", "एक और पंचवटी", "रेखाकृति" आदि हिन्दी उपन्यास महत्वपूर्ण हैं। जिसमें अन्सलजी ने महानगरीय जनजीवन की मध्यवर्गीय नारी की स्थिति और गति को वाणी देने का काम किया है। अन्य हिन्दी उपन्यास लेखिकाओं में एक बहुश्रुत उपन्यास लेखिका के रूप में अन्सलजी का महत्वपूर्ण स्थान लगता है।

इसके साथ-साथ अन्य महिला उपन्यास लेखिकाओं के नये-नये उपन्यास भी प्रकाश में आ रहे हैं अथवा प्रकाशनाधीन भी हैं। उपन्यास तो इन लेखिकाओं के पूर्व विषयानुरूप ही हैं और कहीं नये विषय, नये कथ्य और नये भावबोध को रूप देते हुए नये क्षितिजों का स्पर्श कर रहे हैं। प्रेम और सेक्स को अपनी औपन्यासिक कृति में नया रूपाकार देने वाली उपन्यास लेखिका सहसा ही जब अपने नये उपन्यास में राजनीति की बीन बजाने लगती हैं, तब उसके इस कथ्य एवं तथ्य परिवर्तन को देखकर पाठक चौंकता भी है और आश्चर्यचकित भी हो जाता है। विषय वैविध्य स्वाभाविक प्रक्रिया है यह सत्य है। किन्तु ऐसी स्थिति में लेखिका विशेष के साहित्य को नये सिरे से परखने के लिए पाठक और आलोचक बाध्य हो उठता है यह भी सत्य है और पुरूष उपन्यासकारों द्वारा अपनाया गया अब कोई भी क्षेत्र महिला उपन्यासकारों के लिए अलग नहीं रहा है यह सत्य और महत्वपूर्ण

भी है।

<u>निष्कर्ष</u>

यहाँ हमने उषादेवी मित्रा, कृष्णा सोबती, शिवानी, उषा प्रियम्वदा, शशिप्रभा शास्त्री, मेहरून्निसा परवेज, मन्नू भंडारी, ममता कालिया, मालती परूलकर, कृष्णा अग्निहोत्री, मंजुल भगत, निरूपमा सोबती, दीप्ति खंडेलवाल, सूर्यबाला, सुनिता जैन, मृदुला गर्ग, मालती जोशी, शुभा शर्मा, मृणाल पांडेय, कुसुम अन्सल आदि महिला उपन्यास लेखिकाओं के उपन्यासों के माध्यम से यह सिद्ध कर दिया है कि इन महिला उपन्यास लेखिकाओं ने नारी मानसिकता के विविध पहलुओं को पाठकों के सामने खोलकर रखा है। इन्होंने प्रेम और बलिदान से ओतप्रोत नारी, त्यागी नारी, भोगवासना से आसक्त नारी, सामाजिक मान्यताओं का उल्लंघन करने वाली नारी, सौन्दर्य के कटु अनुभवों से अभिशप्त नारी, एकाकी जीवन व्यतीत करने वाली नारी, प्रेम और विवाह की पीड़ा से पीड़ित नारी, विसंगत जीवन जीने वाली नारी, पीड़ा में छटपटाहट करने वाली नारी, घर-बाहर के प्रेम-संबंधों में रूचि रखने वाली नारी, दाम्पत्य जीवन की घुटन से पीड़ित नारी, पति-पत्नी तनाव के बीच से गुजरने वाली नारी, पति प्रेम से विहीन नारी, पति-पत्नी के संघर्ष में अपने बच्चों से घृणा करने वाली नारी, आन्तरिक पीड़ा से पीड़ित नारी, ग्राहस्थ जीवन को बनाने-बिगाड़ने वाली नारी आदि नारी के कई रूपों का चित्रांकन किया हैं। सामाजिक मान्यताओं के बीच नारी की प्रेम और बलिदान की भावना, नारी की त्यागी प्रवृत्ति, नारी द्वारा मान्यताओं का उल्लंघन, नारी सौन्दर्य के कटु अनुभव, एकाकी नारियाँ, नारी के प्रेम और विवाह की समस्या, नारी जीवन की विसंगति, नारी की छटपटाहट, नारी के घर-बाहर के संबंध, दाम्पत्य जीवन की घुटन, नारी की यातना से मुक्ति के लिए छटपटाहट, पति-पत्नी तनाव के बीच बच्चों की दयनीय स्थिति, पति-पत्नी के बीच प्रेमविहीन रिश्ते, आधुनिक समाज की विडम्बना, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, नारी की आन्तरिक पीड़ा, ग्राहस्थ जीवन की सफलता-असफलता, सामाजिक मान्यताओं के प्रति संघर्ष, नौकरी पेशा नारी का शोषण, घर-बाहर नारी की घुटनशीलता आदि अनेक पहलुओं पर प्रकाश डालने का काम इन लेखिकाओं ने किया हैं। परंतु अधिकांश महिला उपन्यासकार

प्रेमत्रिक, रोमांटिकता के कटघरे में बंद पडी हुई दिखायी देती हैं। वात्सल्य से ओतप्रोत भावनाओं की अभिव्यक्ति इनके उपन्यासों में कम मिलती है। "आपका बंटी" केवल इसी दिशा में उल्लेखनीय लगता है। इन लेखिकाओं के विवरण में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव लक्षित होता है। इनके उपन्यासों में रोमांटिकता की अपेक्षा नारी दर्द की असलीयत रहती तो भारतीय नारी संस्कृति को ये उपन्यास गौरवान्वित करते। परंतु भारतीय नारी संस्कृति में गिरावट लाने वाली अनेक बातों का जिक्र इनके उपन्यासों में देखने को मिलता हैं। सामाजिक मान्यताओं के खिलाफ संघर्ष करने वाली नारी, नौकरी पेशा में शोषित नारी, घर-बाहर की घुटन से पीड़ित नारी, नैतिकता-अनैतिकता की सीमाओं को लाँघने वाली नारी, अर्थाभाव से पीड़ित नारी, उच्छृंखल और मुक्त संचार करने वाली नारी आदि नारी जीवन के विविध आयामों पर प्रकाश डालकर आज की आधुनिक नारी जीवन के पर्तों को खोलने का काम सफलता के साथ किया है। परंतु यह काम करते समय अधिकांश महिला उपन्यासकारों ने प्रेमत्रिक, घर-बाहर के संबंध, अवैध यौन-संबंध आदि के कटघरे में खुद के उपन्यास साहित्य को बंद कर दिया है। बालमनोविज्ञान बालमानस की समस्याएँ, बालकों के प्रति वात्सल्य की भावनाएँ उनके उपन्यासों में अभाव से ही आयी हैं। "आपका बंटी" मात्र इस दिशा में उल्लेखनीय लगता है। अधिकांश महिला उपन्यास लेखिकाओं ने भारतीय नारी संसकृति पर पाश्चात्य संस्कृति को हावी कर दिया है। इनके उपन्यासों में रोमांटिकता की अधिकता रही हैं। इन्होंने विधवानारी, परित्यक्ता नारी, अविवाहित नारी के दुःख-दर्द को वाणी देते समय बाह्य-संबंधों का इनके साथ नाता जोडा है। इन लेखिकाओं ने भारतीय नारी के दुःख-दर्द का असली चित्रण किया होता तो भारतीय नारी संस्कृति को ये उपन्यास गौरवान्वित कर सकते परंतु इन लेखिकाओं ने भारतीय नारी संस्कृति में गिरावट लाने वाली अनेक विकृत घटनाओं का जिक्र किया है। इन महिला लेखिकाओं के उपन्यास ने अंतर्बाह्य नारी मानसिकता पर प्रकाश डालने की अपेक्षा केवल प्रेम तत्व को ही अधिक महत्व दिया है। सेक्स को अधिक प्रश्रय दिया है। इन्होंने केवल उच्च वर्ग, उच्च-मध्य-वर्ग, मध्यवर्ग की नारियों के परिवेश को ही अपने उपन्यासों के विषय

बनाये हैं। दलित नारी, ग्रामीण नारी, झुग्गी-झोपडपट्टी वाली नारी, पहाड़ी नारी के दुःख-दर्दों का चित्रण ये महिला उपन्यासकार करती तो उनका उपन्यास साहित्य समाज जीवन से सम्पृक्त हो सकता और सभी स्तरों पर संचार करने वाली नारी की व्यथा-कथा का चित्रण उन्हें और अधिक ऊँचा बना सकता परंतु इसका यहाँ अभाव लक्षित होता है।

हिन्दी की महिला उपन्यास लेखिकाओं के नारी पात्र

आधुनिक संदर्भों में लिखे गये उपन्यासों में दो विशेष प्रवृत्तियाँ देखी जा सकती हैं। एक प्रवृत्ति है जटिल मनःस्थितियों में जकड़े हुए व्यक्तियों के जीवन स्थितियों की या मनोदशाओं के चित्रण की तो दूसरीहै मानव स्थितियों की क्रूर सच्चाई के उद्घाटन की। ये दोनों ही स्थितियाँ नारी के सौन्दर्य में पुरूष की अपेक्षा अधिक गहराई और संश्लिष्टता के साथ आँकी गई है। यौन स्थितियों से निर्मित मानसिकता के अनेक स्तर और प्रकार नारी जीवन के आधुनिक स्थितियों के ही अनेक रूपों और स्तरों को प्रतिफलित करते हैं। एक ओर नारी जीवन संबंधी परम्परागत आदर्शों में तीव्र परिवर्तन इस युग की विशेषता रही है। तो दूसरी ओर नारी की बद्धमूल जटिल मानसिकता उसके अन्तर और बाहय में तादात्म्य नहीं होने देती है। आधुनिक उपन्यास इस तथ्य को प्रकट करने में काफी कुछ सफल कहे जा सकते हैं। छठे दशकोंपरान्त उपन्यास में सामाजिक जीवनानुभव की सच्ची तस्वीर पेश की है। इसमें उपन्यासकार की दृष्टि की आधुनिकता एक संदर्भ मात्र से जुड़कर नहीं रह गई है। सघन जीवन यथार्थ के बीच एक रचनात्मक शक्ति का परिचय इन उपन्यासों में मिलता रहा है।

शहरी जीवन की पूरी-पूरी पकड़ किसी एक उपन्यास में संभव नहीं। आपनी समूची परिणतियों के साथ अलग-अलग दायरे की नारी की पहचान ये उपन्यास कराते हैं। यौन संबंधों को लेकर उन्मुक्तता का दिशा संकेत इन उपन्यासों में बिखरा पडा है। विवाह संस्था की अनिवार्यता को नकारते जाने की मानसिकता को लेकर नारी आगे बढ तो रही है।

"आर्थिक समस्या और उसके समाधान से जूझती नारी की तस्वीर भी इन उपन्यासों का पहलू बनी है।"[15] माता-पुत्री, सास-बहू, पति-पत्नी, देवर-भाभी, पिता-पुत्र, सभी के आपसी रिश्ते आर्थिक स्वार्थों में बंधे जाने पर स्वाभाविक न रह कर कृत्रिम होते जा रहे हैं। यह स्पष्ट संकेत इन उपन्यासों में देखा जा सकता है।

नारी उपन्यास लेखिकाओं ने अपने उपन्यासों द्वारा जो पात्र प्रस्तुत किये हैं, वे बहुत अधिक प्रभावशाली और सजीव लगते हैं। उषादेवी मित्रा के "बचपन का मोल" की नायिका "कजरी" धनसम्पन्न, विद्याविभूषित होकर भी मृत्यु शैय्या पर पडे रोग ग्रस्त सरोज से वह प्रेम करती है और आजीवन अविवाहित रहती है। कजरी आदर्श और वचनबद्ध नारी पात्र लगता है। उनके प्रिय उपन्यास में "प्रिया" और "निलिमा" जैसी विधवा नारियों की त्रासदी का चित्रण मिलता हैं।

कृष्णा सोबती के "सूरजमुखी अँधेरे के" की नायिका रति की संभोगाभिमुख प्रवृत्ति पर प्रकाश पडता है। शिवानी ने "विषकन्या" की दोनों सुन्दर जुडवा बहनों की कथा को केंद्र में रखकर कामिनी के एकाकीपन को खोलकर रखा है।

शिवानी के "गेंडा" उपन्यास में राज और सुवर्णा दो सहेलियों की कथा विशद की हैं। राजा प्रत्येक प्रतियोगिता से सुवर्ण को हराती है। किन्तु विवाह के क्षेत्र में वह हार जाती है। राज का पति सम्पन्न है। किन्तु सूरत में गेंडा है। उधर सुवर्णा का पति सुदर्भ है। वेद के विदेश चले जाने पर राज सुवर्णा के यहाँ रहने लगती है। राज के पेट में सुवर्णा के पति की सन्तन है। सुवर्णा एक मौलवी के पास जाकर इस रहस्य को खोलती है। विषासक्त भोजन करने के कारण राज की मृत्यु हो जाती है। इस तरह उपन्यास में मौलवी को प्रवेश देकर लेखिका ने उसके स्तर को दिखाया है।

"माणिका" की नायिका परम्परागत नारी से भिन्न एक ठगिनी और कातिल है। पैसे के लिए पति की हत्या करती है। नलिनी मिश्रा के घर आकर रहती है

और कुछ समय बाद उनकी हत्या करके अज्ञात दिशा की ओर बढ़ जाती है।

"कृष्णा वेणी" प्रेम भरी मर्मगाथा है। कृष्ण वेणी को दिव्य दृष्टि प्राप्त है, जिससे सबका भविष्य बता देती है। अनजाने ही वह अपना भविष्य भी बता देती है। जो सत्य होता है। कार दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो जाती है।

"क्योंकि" उपन्यास में शशिप्रभा शास्त्री ने नारी मन की भावनाओं को बड़ी खूबी से उकेरा है। जेवरों के प्रति सहज आकर्षण, बच्चों के प्रति ममत्व, पति की सहयोगिनी, दूसरों के प्रति सहानुभूति रखने वाली एक सफल नारी का चित्रण जामा के माध्यम से किया गया है।

"कर्करेखा" की नायिका तनु एक नौकरी पेशा युवती है। आदर्शवादी युवक अनिंद्य से विवाह के बाद वह सुखी और पति के प्यार से भरपूर जीवन की कामना करती है।फिर भी तनु को उसमें कमी प्रतीत होती है। पुत्रवती होते हुए भी उसे लगता है कि उसका पति निकटतम रहकर भी बहुत दूर है।

निर्मला वाजपेयी के "सूखा सैलाब" की नायिका ममता एक मध्यवर्गीय परिवार की युवती है। आदर्शों को मानने वाली युवती है। कैलाश ममता को पाश्चात्य सभ्यता में गिणना चाहता है। ममता पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण करके कैलाश के प्रति अपनी सहानुभूति नहीं रखती। ममता नाग नृत्य प्रस्तुत करती है। वह नाम मात्र के वस्त्र पहनकर मंच पर आती है, जिसे देखकर कैलाश स्टेडियम के बाहर आ जाता है। उधर ममता बीन की ध्वनि में डूबी नृत्य करती है।

क्रान्ति त्रिवेदी के "तृषिता" उपन्यास की नायिका आरती है। आरती का विवाह रंजीत से होता है। रंजीत का मित्र दिलीप उसे पाना चाहता है। जिसके कारण आरती इटावा चली जाती है। वहाँ उसे स्वदेश मिलता है। वह तस्करी का कार्य करता है। रंजीत और दिलीप उसे लेने आ जाते हैं। स्वदेश स्मगलिंग की दीर्घकालीन यात्रा पर जाता है। वह आरती को भी ले जाना चाहता हैं। वह आरती से कहता है "मैं क्या मन्दिर में तुम्हारी सदैव प्रतीक्षा करूँगी।"

मंजुल भगत के "टूटा हुआ इन्द्रधनुष्य" उपन्यास एक त्रिकोणात्मक प्रेम कथा है। इसमें प्रेम का चित्रण एक नये रूप में किया गया है। मानवी शोभना से प्यार करता है जो प्रभात की पत्नी है। उसका विवाह अर्चना से होता है। मनीष प्रभात की अनुपस्थिति में शोभना को पूरी आत्मसात कर लेता है, जिसकी परिणति पुत्री संध्या के रूप में होती है। प्रभात को इसका ज्ञान हो जाता है वह इसे सामान्य घटना के रूप में लेता है। अर्चना शोभना से पति की धरोहर संध्या को माँगने जाती है। शोभन, प्रभात, मनीषा, अर्चना के बीच पारिवारिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। अर्चना प्रभात को रक्षाबंधन के सूत्र में बाँधकर भाई बना लेती है और मनीष-शोभन की वासनायें सो जाती है।

"नारी उपन्यास लेखिकाओं के नारी पात्रों का मूल स्वर प्रेम और वेदना है।"[16] प्रेम और वेदना दोनों का ही अद्भूत सामंजस्य उनके जीवन में मिलता है। नारी प्रेम का प्रतिदान नहीं माँगती। यही उसकी सबसे बड़ी विशेषता है। वह सजल नयनों से अपने प्रेम को लुटते देखती है। लेकिन बोलती नहीं यही तो उसके जीवन का दिव्य वरदान है।

अमृता प्रीतम ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि औरत जब किसी से प्यार करती है, कितना प्यार करती है। नीरे पुरब के कालिदास की शकुन्तला ही नहीं बल्कि पश्चिम के हार्डी की टैस भी···"जब पानी के बरतन में अपने दोनों हाथ डालकर अपने प्यार के हाथों से खेलती है और वह उँगलियाँ उसके उँगलियाँ में डालकर पूछता है, बताओ तो तुम्हारी कितनी उँगलियाँ हैं और मेरी कितनी ? तो वह कहती है सभी तुम्हारी हैं।"[17]

आज के युग का प्रभाव भी स्त्री उपन्यास लेखिकाओं के उपन्यासों पर स्पष्ट पडा है। यह इन लेखिकाओं की एक बहुत बडी विशेषता है कि सामाजिक प्रभावों से वे अछुती नहीं रही। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से नारी को इतना प्रभावित किया है कि उसके एकनिष्ठ प्रेम की दीवार कहीं-कहीं हिलती-सी लगती है। पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता के प्रभाव के कारण भारत में भी वैवाहिक संबंधों में जो विकृति

आ रही है उसके दर्शन भी हमें होते हैं। नारी उपन्यास लेखिकाओं के समस्त उपन्यासों की नारियों को मुख्यतः हम तीन वर्गों में विभाजित करते हैं -

1· विद्रोहिणी नारियाँ

"सोहनी" की सोहनी, "त्रिवेणी" की विजयश्री, "संकल्प" की शक्ति, "मोम के मोती" की माया आदि नारियाँ इस वर्ग से संबंधित है।

2· उपेक्षित नारियाँ

कविता, प्रतिमा, "प्रिया", चन्द्रिका, "त्रिवेणी", उमा "संकल्प", नन्दिनी, शालिनी "मूक तपस्वी", करूणा "पानी की दीवार", रानी "काली लडकी" आदि इसी वर्ग की नारियाँ है।

3· निष्काम प्रेमिकायें

पयोहरा "प्रिया", सोहनी "सोहनी", नन्दिनी शालिनी "मूक तपस्वी", ममता "डाक्टर देव" आदि नारियाँ एकनिष्ठ प्रेमिकायें एवं मौन साधिकायें है।

निष्कर्ष

प्रायः ये सभी नारियाँ "काली लडकी" की कावेरी और माँ को छोडकरजीवन में अपने को नीचे नहीं गिरने देती। चरित्र की महत्वाकांक्षा इनके जीवन का मूल मंत्र है। स्त्री उपन्यास लेखिकाओं के उपन्यासों की नारियाँ मानवीय हैं। उन्हें अपने देवी होने का मिथ्या अभिमान नहीं। समाज से उपेक्षिता होते हुए भी वे त्याग और सहनशीलता आदि गुणों से विभूषित लगती हैं। वे यौन विकृति की शिकार अधिक मात्रा में लगती हैं। उनके व्यक्तित्व में नारित्व की प्रधानता है, आत्मसमर्पण की भावना है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्त्री उपन्यास लेखिकाओं ने अपने उपन्यासों द्वारा जिन नारी चरित्रों की अवधारणा की उनका अपना ही महत्व है। वे जीवन के प्रति ईमानदार हैं और साथ ही उनमें मानवीय गुणों की प्रतिष्ठा हुई है।

इन नायिकाओं पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव होकर भी ये नारियाँ पुरूष की छाया में पलना ही हितकारी समझती है।

निष्कर्ष

इस लघु-शोध-प्रबंध के प्रथम अध्याय में हमने आज के समाज में नारी का स्थान, आज की आधुनिक नारी, नारी मुक्ति आन्दोलन, हिन्दी की महिला उपन्यासकारों के उपन्यास एक अवलोकन, हिन्दी की महिला उपन्यास लेखिकाओं के नारी पात्र आदि को नजरांदाज करते हुए आज की भारतीय नारी की स्थिति और गति पर चिंतन किया है। आज भारतीय संविधान से भारतीय महिला विकास के अनेक आयामों को प्रस्तुत करते हुए नारी को आत्मनिर्भर, स्वावलंबी बनाने का प्रयत्न शुरू किया है। उसके लिए कानूनी संरक्षण देने का प्रयत्न किया है। घर-बाहर उसके खिलाफ होने वाले शोषण की रोकथाम के लिए कई कानून बनाये हैं। महिलाओं में छोटे-छोटे उद्योग शुरू करने के लिए अर्थसहाय्य देना शुरू किया है। विधवा पुनर्विवाह का कानून पालित किया है। इस स्थिति में आज की नारी सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ती जा रही है। इन नारियों पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव हावी होने के कारण इनमें कई विकृतियाँ भी आने लगी हैं। नारी आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षिक , औद्योगिक सभी स्तरों पर अपनी अमीट छाप छोड रही हैं। घर-परिवार को सुरक्षित रखकर नारी का विकास हो तो यह अच्छी बात है परन्तु घर-परिवार की सुरक्षितता को बिना नजरांदाज किए नारी बाहय जगत् में खुद का विकास करें तो भारतीय संस्कृति के लिए यह चिन्ता की बात है। बहुतांश सुशिक्षित और सुसंस्कृत नारियाँ आज भी पुरूष की छाया में ही पलना चाहती है जो एक प्रशंसनीय बात है। कई नारियाँ आधुनिकता के नाम पर, मुक्ति के नाम पर, कानून के नाम पर, समाज पर हावी होने लगेंगी तो यह चिन्ता का विषय होगा। साठोत्तरी कालखंड की महिला उपन्यासकारों ने भारतीय नारी के विविध रूपों का चिंतन करके उसके यौन-विकृत रूप पर ही अधिक प्रकाश डाला है जो भारतीय नारी संस्कृति के लिए बाधक लगता है। उदात्त और आदर्श नारी रूप पर इन्होंने कम सोचा है।

सं द र्भ

1· "राष्ट्रवाणी" दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास, कर्नाटक शाखा, धारवाड द्वारा संचलित, वार्षिक पत्रिका 1993-94 से उद्धृत, पृ·22

2· डॉ·किरण बाला आरोडा, साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी, अन्नपूर्णा, प्रं·कानुपर, प्र·सं·1990, पृ·96

3· वही, पृ·97

4· डॉ·सौ·सी·व्ही·घोरपडे, साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में परिवर्तित नारी जीवन मूल्य, अप्रकाशित शोध-प्रबंध, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर, सितम्बर 1993, पृ·379

5· डॉ·शीलप्रभा वर्मा, महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ, विद्याविहार, कानपुर, प्र·सं·1987, पृ·1

6· दीपशिखा, महादेवी वर्मा, भूमिका से उद्धृत

7· वही,

8· डॉ·शीलप्रभा वर्मा, महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ, विद्याविहार, कानपुर, प्र·सं·1987, पृ·19

9· वही, पृ·27

10· डॉ·मधुसंधु, साठोत्तर महिला कहानीकार, सन्मार्ग प्र·दिल्ली, प्र·सं·1984, पृ·133

11· वही, पृ·75

12· डॉ·शीलप्रभा वर्मा, महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ, विद्याविहार, कानपुर, प्र·सं·1987, पृ·36

13· वही, पृ·43

14· वही, पृ·46

15· डॉ·विमला शर्मा, साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूप, संगम प्रं· दिल्ली, प्र·सं·1987, पृ·192

16· डॉ·शैल रस्तोगी, हिन्दी उपन्यासों में नारी वि·भू·प्रकाशन, साहिबाबाद प्र·सं·1977, पृ·295

17· वही, पृ·295